उत्तराखण्ड उच्च न्यायालय नैनीताल।

रिट याचिका संख्या 2760(एम0/एस0) 2014

चरणजीत सिंह व अन्य **याचिकाकर्तागण।**

बनाम

श्रीमती किरन व अन्य **उत्तरदातागण।**

श्री नीरज गर्ग,याचिकाकर्तागण के अधिवक्ता।

श्री पियूष गर्ग,उत्तरदातागण के अधिवक्ता।

माननीय लोकपाल सिंह,जे.(मौखिक)

1. याचिकाकर्तागण द्वारा विद्वान जिला न्यायाधीश देहरादून द्वारा सिविल पुनरीक्षण संख्या 130/2014 श्रीमती किरन बनाम चरणजीत सिंह व अन्य में पारित आक्षेपित निर्णय तथा आदेश दिनांकित 24.11.2014 को चुनौती दी गई है, जिसमें विद्वान पुनरीक्षण न्यायालय द्व ारा ,विद्वान द्वितीय अपर सिविल जज (प्रवर खण्ड) देहरादून द्वारा मूल वाद संख्या 481/2001 श्रीमती किरन बनाम श्रीमती रंजना (वर्तमान में मृतक) तथा अन्य में पारित आदेश दिनांकित 31.07.2014 को अपास्त किया गया था।
2. मामले का तथ्य इस प्रकार है कि वादी/ उत्तरदाता संख्या 01 द्वारा प्रतिवादीगण के विरूद्व निषेधात्मक व्यादेश की डिक्री हेतु मूल वाद संख्या 481/2001 श्रीमती किरण बनाम श्रीमती रंजना (वर्तमान में मृतक) व अन्य योजित किया गया था। प्रतिवादी संख्या 01 श्रीमती रजंना पर समन की पर्याप्त तामिली के पश्चात भी वह उपस्थित नही आयी तथा लिखित कथन दाखिल नही किया गया। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 23.10. 2003 को आदेश पारित किया गया कि वाद उसके विरूद्व एक पक्षीय अग्रसारित होगा।
3. प्रतिवादी संख्या 01 श्रीमती रंजना द्वारा, आदेश दिनांकित 23.10.2003 को पारित आदेश को रिकाल करने हेतु, दिनांक 20.04.2005 को प्रार्थना पत्र कागज संख्या 37–सी–2 योजित किया गया। उपरोक्त आवेदन के लम्बित रहने के दौरान श्रीमती रंजना का निधन हो गया। याचिकाकर्ता को सम्मलित करते हुये श्रीमती रंजना के विधिक प्रतिनिधिगण द्वारा, प्रतिस्थापन प्रार्थनापत्र योजित किया गया जो कि स्वीकार हुआ। दिनांक 30.01.2009 को विधिक प्रतिनिधिगण (यहॉ याचिकाकर्ता) को अभिलेख पर लाया गया।
4. विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा आदेश दिनांकित 09.11.2011 से, दिनांकित 23.10.2003 के आदेश को रिकाल करने के आवेदन को स्वीकार किया गया व दिनांक 30.11.2011 नियत की गई तथा याचिकाकर्तागण को दिनांक 30.11.2011 तक उनका लिखित कथन दाखिल करने की अनुमति दी गई। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा याचिकाकर्तागण को उनका लिखित कथन दाखिल करने के लिये समय प्रदान किये जाने के पश्चात भी, उनके द्वारा

निर्धारित समय के भीतर लिखित कथन दाखिल नही किया गया। तत्पश्चात्, याचिकाकर्तागण द्वारा दिनांक 15.07.2013 को उनका लिखित कथन दाखिल किया गया। लिखित कथन दाखिल करते समय विलम्ब को क्षमा करने व लिखित कथन को अभिलेख पर लेने हेतु प्रार्थना नही की गई। इस पर वादी द्वारा एक प्रार्थना पत्र योजित किया गया कि चूकिं लिखित कथन नियत समय के भीतर दाखिल नही किया तथा लिखित कथन दाखिल करने में हुये विलम्ब को क्षमा करने हेतु कोई प्रार्थना नही की गई, अतः याचिकाकर्तागण द्वारा दाखिल लिखित कथन खारिज किया जाये। याचिकाकर्तागण द्वारा प्रार्थना पत्र पर आपत्ति दाखिल की गई तथा प्रार्थना पत्र कागज संख्या 106–सी प्रस्तुत किया गया कि लिखित कथन दाखिल करने में कोई विलम्ब कारित नही किया गया है तथा यदि न्यायालय यह पाती है कि लिखित कथन दाखिल करने में कोई विलम्ब कारित हुआ है, ऐसा विलम्ब क्षमा किया जा सकता है। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 31.07.2014 को याचिकाकर्तागण द्वारा दाखिल प्रार्थना पत्र कागज संख्या 106–सी को, रूपये 1,000 हर्जे पर यह कारण देते हुये स्वीकार किया गया कि वाद का निस्तारण गुण–दोष के आधार पर होना चाहिये। हालांकि ना ही उन्हें दिये गये समय के भीतर लिखित कथन दाखिल न करने के सम्बन्ध में कोई पर्याप्त स्पष्टीकरण ही दिया गया, ना ही लिखित कथन दाखिल करने में हुये विलम्ब के समय को स्पष्ट किया गया, परंतु विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा इस कारण से कि, वाद का निस्तारण गुण दोष के आधार पर होना चाहिये, प्रार्थना पत्र को स्वीकार किया तथा लिखित कथन को अभिलेख पर लिया गया।

5. उक्त से क्षुब्ध होकर, वादी द्वारा अर्न्तगत धारा 115 सी0पी0सी0 उत्तराखण्ड राज्य द्वारा यथा सशोंधित के अन्तर्गत सिविल पुनरीक्षण दायर किया गया। सी0पी0सी0 की धारा 115 के संशोधित प्रावधान का उद्वरण इस प्रकार हैः

"115. पुनरीक्षण – (1) उच्चतर न्यायालय अधीनस्थ न्यायालय द्वारा मूल वाद या अन्य कार्यवाही में विनिश्चित किये गये मामले में पारित आदेश का पुनरीक्षण कर सकेगा, जहॉ कोई अपील आदेश के विरूद्व दाखिल नही होती और जहॉ अधीनस्थ न्यायालय ने–

(क) ऐसी अधिकारिता का प्रयोग किया है, जो उसमें विधि द्वारा निहित न की गयी हो, या

(ख) इस प्रकार निहित अधिकारिता का प्रयोग करने में असफल रहा है ;या

(ग) अपनी अधिकारिता के प्रयोग में अवैधता से या तात्विक अनियमितता से कार्य किया है।

(2) उपधारा (1) के अधीन पुनरीक्षण आवेदन में, जब उच्च न्यायालय में दाखिल किया जाता है, ऐसे आवेदन के प्रथम पृष्ठ पर, वाद के शीर्षक के नीचे इस प्रभाव का प्रमाण पत्र अन्तर्विष्ट होगा कि मामले में कोई पुनरीक्षण जिला न्यायालय में

दाखिल नही होता किन्तु या तो मूल्यांकन के कार्य या पुनरीक्षित किये जाने के लिये ईप्सित आदेश के जिलान्यायालय द्वारा पारित किये जाने के कारण केवल उच्च न्यायालय में दाखिल होता है।

(3) उच्चतर न्यायालय , इस धारा के अधीन, किये गये किसी आदेश को भिन्न कर सकेगा या उलट कर सकेगा। सिवाय वहॉ के,जहॉ–

(i) आदेश, यदि वह पुनरीक्षण के लिए आवेदन करने वाले पक्षकार के पक्ष में किया गया है, वाद या अन्य कार्यवाही को अन्तिम रूप से निस्तारित करेगा, या

(ii) आदेश, यदि स्थिर रहने के लिए अनुज्ञात किया जाता है, न्याय की असफलता कारित करेगा, या उस पक्षकार को अर्पूणीय क्षति कारित करेगा, जिसके विरूद्व वह किया जाता है।

(4) पुनरीक्षण न्यायालय के समक्ष वाद या अन्य कार्यवाही के स्थगन के रूप में प्रवर्तित नही होगा, सिवाय वहॉ के जहॉ ऐसा वाद या अन्य कार्यवाही उच्चतर न्यायालय द्वारा स्थगित किया जाता है।

स्पष्टीकरण 1.–इस धारा में–

(i) पद "उच्चतर न्यायालय" से अभिप्रेत है–

(क) जिला न्यायालय, जहॉ उसके अधीनस्थ न्यायालय द्वारा विनिश्चित किये गये मामले का मूल्यांकन पॉच लाख रूपये से अनधिक है,

(ख) उच्च न्यायालय, जहॉ पुनरीक्षित किये जाने के लिए ईप्सित आदेश जिला न्यायालय द्वारा विनिश्चित किये गये मामले में पारित किया गया था जहॉ जिला न्यायालय के अधीनस्थ न्यायालय द्वारा विनिश्चित किये गये मामले में मूल वाद या अन्य कार्यवाही का मूल्य पॉच लाख रूपये से अधिक है,

(ii) पद "आदेश" में किसी मूल वाद या अन्य कार्यवाही में विवाद्यक का विनिश्चय करने वाला आदेश शामिल है।

स्पष्टीकरण 2.–इस धारा के प्रावधान इस धारा के प्रारम्भ के पूर्व या बाद में ऐसे प्रारम्भ के पूर्व संस्थित मूल वाद या अन्य कार्यवाही में पारित आदेशों को भी लागू होंगे।

स्पष्टीकरण 3.– इस धारा के प्रावधान में इस धारा के प्रारम्भ के पूर्व उच्च न्यायालय में पहले से दाखिल पुनरीक्षण को लागू नहीं होंगें।

(उत्तरांचल अधिनियम 2006 का 1 से, धारा 2, अधिसूचित होने की तिथि से प्रभावी)

6. विद्वान जिला न्यायाधीक्ष द्वारा अपने समक्ष उपलब्ध सामग्री का अवलोकन करने तथा **बलवन्त सिंह (मृतक) बनाम जगदीश सिंह व अन्य, ए0आई0आर0 2010 एस0सी0 3043 तथा संदीप थापड बनाम एस0एम0ई0 टेक्नोलोजीस प्राइवेट लिमेटेड , ए0आई0आर0 2014 एस0सी0 897** मे पारित निर्णय पर विचार करने के पश्चात, इस निष्कर्श पर पहुॅचा गया कि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अवैध रूप से तथा बिना किसी पर्याप्त कारण के अत्यन्त विलम्ब से प्रस्तुत लिखित कथन को अभिलेख पर लेने की प्रार्थना पत्र को स्वीकार किया गया। आगे यह भी पाया गया कि विद्वान विचारण

न्यायालय द्वारा प्रार्थना पत्र को स्वीकार किये जाने का कोई भी कारण नही दिया गया। विद्वान पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण स्वीकार किया गया तथा आक्षेपित आदेश दिनांकित 24.11.2014 को अपास्त किया गया।

7. उक्त से क्षुब्ध होकर प्रतिवादीगण द्वारा भारतीय संविधान के अनुच्छेद 227 के अन्तर्गत वर्तमान रिट याचिका उत्प्रेषण की रिट प्राप्त करने / आदेश दिनांकित 24.11.2014 को अपास्त करने के लिये योजित की गई।

8. याचिकाकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा कथन किये गये कि सी0पी0सी0 के आदेश 8 नियम 1 के प्रावधान प्रकृति में प्रक्रियात्मक है। आगे तर्क दिया गया कि, सी0पी0सी0 के आदेश 8 नियम 1 के प्रावधान न्याय को बढावा देने के लिये है तथा उन्हे न्याय के दास के रूप में माना जाना चाहिये। आगे कथन किये कि सी0पी0सी0 के आदेश 8 नियम 1 में संशोधित प्रावधान इस मामले में लागू होते है। उनके द्वारा यह तथ्य स्वीकार किया गया कि विचारण न्यायालय द्वारा याचिकाकर्तागण द्वारा दिये गये आवेदन को, रूपये 1,000 हर्जे पर स्वीकार करते हुये ,उक्त को स्वीकार किये जाने का कोई कारण नहीं अंकित किया गया है। उनके द्वारा आगे तर्क दिया गया कि पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण को पूर्ण रूप से स्वीकार करते हुये अवैधता कारित की है। याचिकाकर्ता के लिये, न्याय के द्वार को बन्द नही होना चाहिये। उनके द्वारा आगे तर्क दिये गये कि पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा, मामले को नये सिरे से निस्तारण हेतु, विद्वान विचारण न्यायालय को वापस भेजा जाना चाहिये था या वैकल्पिक रूप में हर्जे को बढाया जाना चाहिये था। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उक्त निम्नलिखित निर्णयों **जोल्बा बनाम केशाओं व अन्य (2008) 11 एस0सी0सी 769, सूर्यदेव राय बनाम राम चन्द्र राय व अन्य (2003)6 एस0एस0सी0 675, श्रीमती अंजू त्यागी व अन्य बनाम सिविल जज (एस0डी0), रूडकी व अन्य (2011) 2 यू0ए0डी0 656** पर निर्भर किया गया।

9. इसके विपरीत उत्तरदाता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा तर्क दिये गये कि चूंकि मूल प्रतिवादी श्रीमती रंजना द्वारा उन पर समन की पर्याप्त तामिली के पश्चात भी अपना लिखित कथन निर्धारित समय के भीतर दाखिल नही किया गया, जिसके पश्चात न्यायालय द्वारा उनके विरूद्व एकपक्षीय कार्यवाही अग्रसारित की गयी, तत्पश्चात, उनके द्वारा एकपक्षीय आदेश दिनांकित 23.10.2003 को रिकाल करने हेतु प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किया गया। जब विधिक प्रतिनिधिगण (यहॉ याचिकाकर्ता)को अभिलेख पर लाया गया तब उपरोक्त प्रार्थना पत्र दिनांक 09.11.2011 को स्वीकार किया गया तथा याचिकाकर्तागण को लिखित कथन दाखिल करने हेतु पुनः दिनांक 30.11.2011 तक का समय प्रदान किया गया। आगे यह तर्क दिये गये कि याचिकाकर्तागण को पुनः पर्याप्त अवसर दिये जाने के पश्चात भी उनके द्वारा निर्धारित समय के भीतर लिखित कथन दाखिल नही किया गया,हालांकि उन्होनें एक वर्ष

सात महीने तथा पन्द्रह दिन की अवधि व्यतीत होने के बाद दिनांक 15.07.2013 को लिखित कथन दाखिल करना चुना गया। उत्तरदातागण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा तर्क दिये गये कि लिखित कथन दाखिल करने मे हुये विलम्ब को क्षमा करने हेतु, प्रार्थना पत्र में कोई स्पष्टीकरण या पर्याप्त कारण नही दिया गया।

10. उत्तरदाता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा हाल ही में पारित निर्णय **प्रहालाद शंकर राव ताजले व अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य सचिव (राजस्व) व अन्य, 2018 (2)सुप्रीम 487** पर निर्भर किया गया। निर्णय के पैरा संख्या 16 का उद्धरण इस प्रकार हैः

> "16. यह मामला हमें इस न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश विपिन बोस.जे द्वारा, संग्राम सिंह बनाम इलेक्शन ट्रिब्यूनल कोटा व अन्य ए0आई0आर0 1955 एस0सी0425 में किये गये उपयुक्त पर्यवेक्षण की याद दिलाता है। माननीय न्यायमूर्ति द्वारा बेंच के लिये बोलते हुये, अभिव्यक्ति की सूक्ष्म शक्ति के साथ अपने लेखन के विशिष्ट तरीके से न्यायालयों को याद दिलाया कि, वाद के पक्षकारो के अधिकारो के सन्दर्भ में प्रकिया संहिता को किस प्रकार समझा जाना चाहिये, जो कि उनके जीवन व सम्पत्तियो को प्रभावित करती है। माननीय न्यायमूर्ति द्वारा याद दिलाया गया कि जहॉ तक हो सके, प्रक्रियात्मक विधि को पक्षकारों को दण्डित करने हेतु दाण्डिक प्रावधान की तरह नही समझा जाना चाहिये। वाद के पक्षकारो के साथ सारवान न्याय करने हेतु निम्नलिखित हउत्कर्ष्ट मार्ग का हमेशा अनुसरण किया जाना चाहिये :
>
> " प्रक्रिया संहिता को ऐसा माना जाना चाहिये। यह ऐसी प्रक्रिया है जिसे न्याय को सुगम बनाने तथा उसके लक्ष्यों को आगे बढाने हेतु रचा गया है, दण्ड व शास्तियों के दण्डात्मक अधिनियम के रूप में नही। ना ही लोगों को उलझाने की चीज है। धारा का अति तकनीकी अर्थ लगाना कि युक्तियुक्त लचीलेपन के लिये गुजांइश ना हो ऐसा करने से सांवधान रहे (बशर्ते हमेशा दोनों पक्षों के साथ न्याय हो) ऐसा ना हो कि न्याय को आगे बडाने के साधनो का इस्तेमाल उसे विफल करने के लिये किया जाये। हमारी प्रक्रिया विधि, नैसर्गिक न्याय के सिद्वान्त पर आधारित है जिसकी लिये आवश्यक है कि व्यक्तियों को बिना सुने दोषी नही ठहराया जाना चाहिये, उनके पीठ–पीछे फेसले नही होने चाहिये, कार्यवाही जो उनके जीवन व सम्पत्ति को प्रभावित करती है उनकी अनुपस्थिति में जारी नही रखनी चाहिये तथा उसमें भाग लेने से उन्हें नही रोका जाना चाहिये। अवश्य ही अपवाद होने चाहिये तथा जहॉ वह स्पष्ट रूप से परिभाषित है ,उन्हें लागू किया जाना चाहिये। लेकिन बडे स्तर पर तथा उक्त परंतुक के अधीन हमारी प्रक्रिया विधि, का अर्थ

जहॉ पर भी युक्तियुक्त रूप से सम्भव हो उक्त सिद्वान्त के आलोक में लिया जाना चाहिये। ″

11. उत्तरदातागण के विद्वान अधिवक्तागण द्वारा, माननीय उच्चतम न्यायालय के द्वारा पारित अन्य निर्णय **एटकॉम टेक्नोलोजिस लिमेटेड बनाम वाय0ए0चूनावाला तथा कम्पनी व अन्य** (2018) 6 एस0सी0सी0 639 जहॉ सी0पी0सी0 के आदेश 8 नियम 1 पर चर्चा की गई है, पर निर्भर किया गया। उक्त में से सुसंगत पैरा संख्या 20 ,21 व 22 का यहॉ उल्लेख किया जा रहा है।

> ″20. यह प्रावधान कई मामलों में इस न्यायालय के समक्ष व्याख्या के लियेआया है। निसंदेह नब्बे दिन के पश्चात का नही होगा ´शब्द , उक्त समय के पश्चात् लिखित कथन स्वीकार करने की न्यायालय की शक्ति को नही छीनते तथा यह भी अभिर्निधारित किया गया है कि प्रावधान की प्रकृति प्रक्रियात्मक है तथा यह सारवान विधि का भाग नही है। साथ ही इस न्यायालय द्वारा यह भी आदेश किया है कि उक्त समय केवल आसाधारण कठिन मामलो मे ही बढाया जा सकता है। हम सलेम एडवोकेट बार एसोसिएशन, तमिलनाडू बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया (2005) 6 एस0सी0सी0 344 के मामले में की गई चर्चा को पुनः प्रस्तुत करना चाहते है।
>
> ″21. ...आदेश 8 नियम 10 में ऐसा कोई प्रतिबन्ध नही है कि नब्बे दिन की समाप्ति के पश्चात अग्रतर समय नही प्रदान किया जा सकता। न्यायालय के पास ″ वाद के सम्बन्ध में ऐसा आदेश जैसा वे उचित समझे ″ पारित करने की, व्यापक शक्ति है। अतः स्पष्ट रूप से आदेश 8 नियम 1 के प्रावधान में, जो लिखित कथन दाखिल करने के लिये दी गई नब्बे दिन की अधिकतम सीमा दी गई है, निर्देशात्मक है। यह कहने के पश्चात, हम यह स्पष्ट करना चाहते है कि लिखित कथन दाखिल करने हेतु अवधि का विस्तार करने का आदेश, रूटीन में नही दिया जा सकता। समय का विस्तार केवल असाधारण कठिन मामलों में ही किया जा सकता है ।समय का विस्तार करते समय यह ध्यान रखना होगा कि विधायिका द्वारा अधिकतम समय सीमा नब्बे दिन निर्धारित की गई है। समय का विस्तार करने हेतु न्यायालय के विवेक का लगातार नियमित रूपसे प्रयोग नही किया जाना चाहिये जिससे आदेश 8 नियम 1 में निर्धारित अवधि ही निष्प्रभावी हो जाये।
>
> 22. ऐसी स्थिति में , तीस दिन के भीतर लिखित कथन दाखिल न

कर पाने पर, अभिवचन करने व वैध कारण को समाधानप्रद दर्शाने का प्रतिवादी परदायित्व, उच्च स्तर का है। जब यह आवश्यकता है ,उस स्थिति में क्या यह पॉच साल से अधिक के विलम्ब को क्षमा करने का आधार हो सकता है, जबकि उक्त की गणना वर्ष 2009 से की जा रही है केवल इस कारण कि समन की तामिली 2009 तक नही हुई थी?

23. उच्च न्यायालय द्वारा विलम्ब को क्षमा करने में दिये गये, इस प्रकार के तर्क को समझ पाने में हम स्वंय को विफल पाते है जिसमे सिविल प्रक्रियासंहिता 1908 के आदेश 8 नियम 1 के प्रावधानों व उसके पीछे की भावना की अवहेलना होती है। उच्च न्यायालय द्वारा विलम्ब को क्षमा करने का यह कारण कि अधिकारो तथा साम्या को संतुलित करने हेतु ´ अति क्लिष्ठ है और इस प्रक्रिया में बिना सुसंगत कारक को सम्बोधित किये अर्थात क्या उत्तरदातागण द्वारा ऐसे विलम्ब का सही व पर्याप्त स्पष्टीकरण दिया गया था लिखित कथन दाखिल करने में हुये असामान्य विलम्ब को क्षमा किया गया। उच्च न्यायालय का यह दृष्टिकोण स्पष्टरूप से विधि में त्रुटिपूर्ण है तथा इसका समर्थन नही किया जा सकता। निसंदेह सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 के आदेश 8 नियम 1 के प्रावधान प्रकृति में प्रक्रियात्मक है इस प्रकार न्याय की दासी है। तथापि इसका अर्थ यह नही है कि प्रतिवादी को विलम्ब का बिना आश्वस्त करने वाला तथा ठोस कारण बताये, लिखित कथन दाखिल करने मे जितना वह चाहता है उतना समय लेने का अधिकार है तथा उच्च न्यायालय को उसे यान्त्रिक रूप से माफ करना है।

12. पक्षकारो के विद्वान अधिवक्तागण को सुनने व अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के अवलोकन के पश्चात इस न्यायालय का मत है कि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा याचिकाकर्ता द्वारा बिना किसी कारण का उल्लेख किये प्रस्तुत प्रार्थनापत्र को अवैध रूप से स्वीकार किया है। माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **उत्तरांचल राज्य तथा अन्य बनाम सुनील कुमार वैश तथा अन्य 2011(1)एस0सी0सी 670** में प्रतिपादित किया है कि सिद्वान्त रूप में न्यायिक निर्णय तर्कयुक्त होना चाहिये तथा न्यायिक निर्णय की गुणवत्ता मुख्यतः उसके तर्को की गुणवत्ता पर निर्भर करती है। उचित तर्क, एक अनिवार्य आवश्यकता है जिसका सुविधा के लिये त्याग नही किया जा सकता।

13. विद्वान पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा यह निष्कर्श दिया गया है कि, याचिकाकर्ता द्वारा लिखित

कथन दाखिल करने में हुये विलम्ब को क्षमा करने हेतु कोई स्पष्टीकरण नही दिया गया है तथा प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत प्रार्थना पत्र को अवैध रूप से स्वीकार किया गयौ। इस न्यायालय के विचार मे चूंकि याचिकाकर्ता द्वारा लिखित कथन दाखिल करने में हुये विलम्ब का कोई स्पष्टीकरण नही दिया गया, अतः विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा प्रार्थना पत्र गुप्त तरीके से, बिना कोई कारण दिये स्वीकार नही किया जाना चाहिये था। याचिकाकर्तागण, लिखित कथन को युक्तियुक्त समय के भीतर दाखिल न करने में उनकी निष्क्रियता, कमियों तथा स्वंय की गलती का लाभ नही ले सकते। मैं आक्षेपित निर्णय तथा आदेश में कोई अवैधता, प्रतिकूलता तथा क्षेत्राधिकार की कमी नही पाता हूँ रिट याचिका खारिज होने योग्य है। खारिज की जाती है।

14. इस तथ्य पर विचार करने के बाद कि, मूल वाद वर्ष 2001 में दायर किया गया था ,विद्वान विचारण न्यायालय वाद के शीघ्र निस्तारण का प्रयास करे तथा वाद में अनावश्यक स्थगन से बचें। हर्जे हेतु कोई आदेश नही।

(**लोकपाल सिंह,जे.**)

23.10.2018